चौथे संस्करण की भूमिका

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व विधि के क्षेत्र में हिंदी और भारत की अन्य जनवाणियों का प्रयोग बहुत ही सीमित प्रदेश में हो रहा था। अंग्रेजों के शासन की स्थापना के पहले उत्तरी भारत के अधिकतर हिंदी भाषी क्षेत्रों में शासन व्यवस्था में फारसी का प्रयोग किया जाता था। अंग्रेजों की शासन प्रणाली विधि के एक विशेष प्रकार के निर्वचन पर आधारित थी। इस कारण अंग्रेजी भाषा का विधि के क्षेत्र में उनके द्वारा प्रयोग किया जाना स्वाभाविक था। प्रारंभ में अंग्रेजों ने फारसी को भारतीय भाषाओं में सर्वोच्च स्थान दिया किंतु आगे चलकर इसका प्रयोग 1837 में समाप्त कर दिया।

भाषा प्रयोग से बनती है प्रयोगशाला में नहीं। हिन्दी का शासन में प्रयोग न होने के कारण इसमें ऐसी विधि शब्दावली की कमी थी जो इंग्लैंड में पनपी विधि की संकल्पनाओं को अभिव्यक्त कर सके। विधान की भाषा और न्यायालय की भाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग नगण्य था। 1787 में ब्रिटिश पार्लमेंट ने यह उपबंध किया था कि भारत संबंधी विधि के भारतीय भाषा में अनुवाद प्रकाशित किए जाएं। प्रारंभ में कुछ अनुवाद हिंदी में तैयार किए गए। 1882 में भारत सरकार ने यह निर्णय किया कि पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत से बिहार की पूर्वी सीमा तक और हिमालय से मध्य प्रदेश की दक्षिणी सीमा तक के समस्त क्षेत्र के लिए केंद्रीय विधेयकों और अधिनियमों के उर्दू अनुवाद ही तैयार किए जाएंगे और भारत सरकार उन्हें ही प्रकाशित कराएगी। बाद में भारत सरकार ने उन अनुवादों को कुछ क्षेत्रों के लिए देवनागरी लिपि में भी प्रकाशित करने का निर्णय किया। उन उर्दू अनुवादों का ही प्रयोग उक्त क्षेत्रों के न्यायालयों द्वारा किया जाने का भी निर्णय किया गया। इस निर्णय से न्यायालय में हिंदी के प्रयोग को आघात पहुंचा। अभी तक उर्दू का प्रयोग फारसी लिपि में हो रहा था अब वही उर्दू, देवनागरी लिपि में प्रस्तुत कर दी गई। इस कारण से हिंदी का विधि के क्षेत्र में अलग से अस्तित्व ही समाप्त हो गया। जिस प्रदेश में हिंदी विधि शब्दावली का प्रादुर्भाव और प्रयोग होना था उस प्रदेश में अरबी-फारसी प्रधान उर्दू शब्दावली का प्रचलन विधि के क्षेत्र में हो गया।

सन् 1895 में काशी नागरी प्रचारणी सभा ने सर एंटनी को एक अभ्यावेदन दिया था जिसमें देवनागरी लिपि के प्रयोग को संयुक्त प्रांत में अनुमत करने की मांग की गई थी। 1897 में एक शिष्टमडल भी मिला। 1901 में न्यायालयों में देवनागरी लिपि के प्रयोग की अनुमति दी गई।

1935 के भारत शासन अधिनियम की धारा 85 में बिधान परिषदों की भाषा अंग्रेजी रखी गई। इसी प्रकार विधान सभा की भाषा अंग्रेजी घोषित की गई। 8.10.1947 को उत्तर प्रदेश में हिंदी भाषा तथा देवनागरी लिपि को परिषद् की भाषा के रूप में स्वीकार किया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उत्तर प्रदेश की विधान सभा ने अपनी पहली बैठक में हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि को विधान सभा की भाषा और लिपि के रूप में अपनाया। इसी प्रकार अन्य हिंदी भाषी राज्यों में भी स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ही विधान सभाओं में हिंदी का प्रवेश हुआ।

कुछ देशी राज्यों में (अलवर, इंदौर, ओड़छा, कोटा आदि) हिंदी में कार्य करने की पहल की गई थी। किंतु सही दिशा निर्देश के अभाव में वस्तुस्थिति यह रही कि देवनागरी लिपि में अरबी-फारसी के बोझिल शब्दों का प्रयोग करके एक विचित्र सी भाषा का प्रयोग होने लगा। हिंदी को विधि और न्यायालय के क्षेत्र से बाहर रखने का एक परिणाम यह हुआ कि हिंदी में विधि संबंधी संकल्पनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए पर्याप्त शब्दावली नहीं बन पाई। दूसरा परिणाम यह हुआ कि विधि में निष्णात् ऐसे व्यक्तियों का भी अभाव हो गया जो हिंदी में प्रारूपण करने या विधि के क्षेत्र में हिंदी का प्रयोग करने में पर्याप्त रूप से सक्षम हों। शब्दावली के अभाव को दूर करने के लिए तत्कालीन बड़ौदा (वडोदरा) राज्य में एक वैज्ञानिक